सामाजिक न्याय एवं मानवाधिकार के संदर्भ में डॉ. अम्बेडकर का चिंतन

कंचन गोयल

संविधान निर्माता डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने अस्पृश्यता निवारण तथा दलितों का वैधानिक अधिकार एवं संरक्षण प्रदान किये जाने के प्रश्न पर अपने संवैधानिक विचारों से सभी को प्रभावित किया था। भारत से कोटि-कोटि दलितों, शोषितों को निर्योग्यताओं, सामाजिक उत्पीड़नों से मुक्ति दिलाना उनका लक्ष्य था। संविधानका उद्देश्य स्वतंत्राता, समानता एवं भ्रातृत्व के सिद्धान्तों पर आधरित एक नयी सामाजिक व राजनीतिक व्यवस्था की स्थापना करना है, जिससे सत्ता पर किसी वर्ग विशेष का सदा आधिपत्य नहीं बना रहे। उन्होंने संविधान में सामाजिक न्याय और मानवाधिकार को संरक्षण के लिये पर्याप्त प्रावधान किये गये हैं। सामाजिक न्याय का अभिप्राय जाति एवं वर्ष की वर्चस्ववादी, शोषणवादी, एकाधिकार व्यवस्था के प्रतिकार से है तथा मानव अधिकार एक विशेष प्रकार के वैश्विक नैतिक अधि ाकार हैं, जिनकी हर व्यक्ति को, हर समाज में और सर्वदा ही आवश्यकता होती है। अतः डॉ. भीमराव अम्बेडकर के योगदान का समूचा राष्ट्र ऋणी है। उनके सराहनीय प्रयासों का परिणाम ही सामाजिक न्याय तथा मानवाधिकारों का संरक्षण एवं संवर्द्धन है।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर की उच्च शिक्षा विदेशो में हुई। बार-एटश्ला की परीक्षा पास करने के पश्चात बम्बई में कुछ दिनों तक वकालत व्यवसाय भी किया। बाद में गवर्नमेंट ला कॉलेज में प्राचार्य नियुक्त हुये। उनकी प्रतिभा विधि के क्षेत्रा में अपूर्व थी। कानून एवं संविधानसम्बन्धी पेचीदे सवालों का जवाब सहज वैज्ञानिक तरीके से प्रस्तुत करने में समर्थ हस्ताक्षर थे।

अम्बेडकर ने अस्पृश्यता निवारण तथा दलितों को वैधनिक अधिकार एवं संरक्षण प्रदान किये जाने के प्रश्न पर अपने संवैधनिक विचारों से सभी को प्रभावित किया था। भारत के कोटि-कोटि दलितों, शोषितों को निर्योग्यताओं, सामाजिक उत्पीड़नों से मुक्ति दिलाना उनका लक्ष्य था। नौकरी छोड़कर अम्बेडकर ने वकालत का पेशा चुना ही इसलिये था कि वहाँ काम करने की आजादी थी और दलितों के वैधनिक अधिकारों की पैरवी करने की सहूलियत थी।

3 अगस्त, 1947 को वह स्वतंत्रा भारत के कैबिनेट मन्त्री बनाये गये और 15 अगस्त, 1947 को देश के आजाद होने पर नेहरू मंत्रिामंडल में देश के प्रथम कानून मंत्री बने। राष्ट्रीय संविधानके निर्माण का गुरूतर दायित्व अम्बेडकर को सौंपा गया। सात सदस्यीय समिति के अध्यक्ष डॉ. भीमराव अम्बेडकर थे। ज्ञातव्य है कि पं. नेहरू ने संविधान निर्माण के लिये आइवर जेनिंग्स का नाम सुझाया था किंतु गांधी ने नेहरू के सुझाव को अनसुना करते हुए कहा कि मैं एक भारतीय संविधान विद्वान भीमराव अम्बेडकर का नाम सुझता हूँ।

अपनी पुस्तक 'वाट कांग्रेस एण्ड गांधी हैव इन टू द अनटचलेबल्स' में कहा है कि संविधान का उद्देश्य स्वतंत्रता, समानता एवं भ्रातृत्व के सिद्धान्तों पर आधरित एक नयी सामाजिक व राजनीतिक व्यवस्था की स्थापना करना है, जिसमें सत्ता पर किसी वर्ग विशेष का सदा आधिपत्य नहीं बना रहे। प्रत्यक्ष रूप से संविधान का उधेश्य अपने सभी नागरिकों के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समानता तथा व्यक्ति की गरिमा एवं राष्ट्र की एकता सुनिश्चित करने वाली बन्धुता सुरक्षित करना है।

सामाजिक न्याय का अभिप्राय जाति और वर्ण की वर्चस्वादी, शोषणवादी, एकाधिकारवादी व्यवस्था के प्रतिकार से है। यह प्रतिकर दक्षिण भारत में पहले शुरू हुआ और उत्तर भारत में ज्योतिबा फूले और डॉ. भीमराव अम्बेडकर के उदय के साथ गतिमान हुआ।

संविधान में सामाजिक न्याय और मानवाधिकार के संरक्षण के लिये पर्याप्त प्रावधान किये गये हैं, फिर भी समय-समय पर कुछ ऐसे मामले आ ही जाते हैं, जिन्हें सुलझाने के लिये पुनर्विचार की जरूरत पड़ती है। हमारे समक्ष चुनौती यह है कि सामान्य नागरिक अधिकारों का ही संरक्षण हम संविधान की मंशा के अनुरूप नहीं कर पा रहे हैं। दिनांक 08 मई 1956 अस्तित्व में आये नागरिक अधिकारों का संरक्षण अधिनियम की धारा-3 में धार्मिक अधिकार, धारा-4 में सामाजिक अधिकार, धारा-5 में अस्पताल आदि में अध्किार, धारा-6 में वस्तुयें बेचने और सेवायें प्रदान करने का अधिकार, धारा-7 1/ए में छुआछूत/अस्पृश्यता पर आधारित अन्य अपराधों के लिये दंड व्यवस्था को संरक्षित किया गया। "जो कोई व्यक्ति, संविधान के अनुच्छेद 12 के अधिन छुआछूत उन्मूलन के कारण किसी अन्य व्यक्ति को प्राप्त किसी ऐसे अधिकार का प्रयोग किये जाने पर विरोध के रूप में या बदला लेने की भावना से उसके शरीर या संपत्ति के विरूद्ध कोई अपराध करता है, तो वह अपराध जहाँ 2 वर्ष की अवधि के कारावास से दंडनीय है, वहां कम से कम 2 वर्ष की अवधि के कारावास और जुर्माने से भी दंडनीय होगा।"

डॉ. अम्बेडकर ने 1942 में स्पष्ट किया था, "संसदीय लोकतंत्र शासन का ऐसा रूप है, जिसमें जनता का काम अपने मालिकों के लिये वोट देना और उन्हें हुकूमत करने के लिये छोड़ देना है। मजदूर वर्ग की राय में शासन की ऐसी व्यवस्था जनता को सरकार का उल्टा रूप है। मजदूर वर्ग के लिये समानता का अर्थ हे, सबको काम करने के लिये समान अवसर मिले और राज्यसत्ता का कर्तव्य है, प्रत्येक व्यक्ति को उसकी आवश्यकताओं के अनुसार विकास के लिये सारी सुविधायें प्रदान करें। मजदूरों के लिये समानता का अर्थ है नागरिक सेवाओं और फौज से लेकर व्यापार और उद्योग-धंधें तक हर तरह के विशेषाधिकार खत्म किये जाने, के सारी चीजें खत्म की जायें, जिनसे असमानता पैदा होती है।" सामाजिक न्याय की वास्तविक भूमि यही है। सामाजिक न्याय, आर्थिक और राजनीतिक बराबरी और सहभागिता के बिना नहीं हो सकता।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर द्वारा प्रदत्त संविधान की प्रस्तावना और उसके अनुच्छेद 38 से जिस सामाजिक न्याय की परिकल्पना की गयी है, वह गरिमा के साथ जीने के अर्थपूर्ण अधिकार से जुड़ी हुयी है।

सामाजिक न्याय संविधान के उस लेख्य को प्राप्त करने की एक अर्थपूर्ण परिकल्पना है, जो सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक समानता की गारंटी देता है। विधि के शासन में वर्ग-विभेद का उत्पादन, सामाजिक न्याय की ही परिणति है। संविधान की प्रस्तावना में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय का अवगाहन किया गया है। विख्यात विधिवेत्ता हेराल्ड लास्की ने कहा है कि- ''जो व्यक्ति निर्धन की व्यथा को समझता है, उसे यह महसूस होगा कि आर्थिक सुरक्षा के बिना स्वतंत्रता का अधिकार बेमानी है।'' राष्ट्रपिता महात्मा गांधी अक्सर कहा करते थे कि- ''प्रत्येक व्यक्ति को काम मिले। वह अपनी मेहनत का खाये। रोटी, कपड़ा एवं मकान की न्यूनतम आवश्यकताओं को पाते हुये एक सम्पूर्ण जीवन जीये।''

सामाजिक न्याय की इस परिकल्पना को मूर्त रूप प्रदान करने की दिशा में स्वतंत्रता भारत की न्यायपालिका की अहम भूमिका रही है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात के पचास वर्षों में न्यायपालिका ने झुग्गी-झोपड़ी एवं फुटपाथ पर जीवन यापन करने वाले असंख्य लोगों के हितों से लेकर ताजमहल के सौन्दर्य को लौटाने तक की दिशा में महत्वपूर्ण न्यायिक निर्णय देकर सामाजिक न्याय की अवधारणा को नया दिशा बोध दिया है। शासन और प्रशासन की पारदर्शिता से जुड़े निर्णय भी सामाजिक न्याय के ही अभिन्न अंग हैं।

यह कटु सत्य है कि हमारे देश के असंख्य व्यक्ति फुटपाथों, झुग्गी-झोपड़ियों और गन्दी बस्तियों में अपना समय पूरा करते हैं। उनके पास न तन ढँकने को वस्त्र होता है और खाने को रोटी। कहने को तो हमारे संविधानमें प्रत्येक व्यक्ति को प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता का अधिकार दिया गया है लेकिन ऐसी परिस्थितियों में यह अधिकार ऐसे लोगों के लिए अर्थहीन एवं बेमानी है। मुम्बई हमारे देश का सर्वाधिक बड़ा औद्योगिक नगर है। यहाँ देश के प्रत्येक कोने का व्यक्ति अपनी दो जून रोटी की जुगाड़ बिठाने के लिए आता है। ऐसे लोगों का रैन बसेरा फुटपाथ और झुग्गी-झोपड़ियों में होता है।

1981 में जब तत्कालीन सरकार ने इन झुग्गी-झोपड़ियों को ध्वस्त करने की मुहिम चलाई तो इस कमजोर तबके ने उच्चतम न्यायालय में दस्तक दी। 'ओलगा टेलिस बनाम म्यूनिसिपल कॉरपोरेशन'[1] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह व्यवस्था दी कि इन व्यक्तियों को ऐसे स्थानों से हटाने से पूर्व रहने की वैकल्पिक व्यवस्था की जाये। मानसून के दिनों में उन्हें हटाने के लिए विवश नहीं किया जाये। उच्चतम न्यायालय का यह निर्णय उन असंख्य लोगों के लिए सम्बल बना जिनके बल पर बम्बई के बड़े-बड़े भवन, अट्टालिकायें और कारखाने स्थापित हुए हैं, बम्बई के विकास की तह में जिनका त्याग और समर्पण छिपा हुआ है।

संविधान के अनुच्छेद 19 (1 N) के अन्तर्गत भारत के प्रत्येक नागरिक को व्यापार, वृत्ति, व्यवसाय एवं कारोबार करने का मूल अधिकार प्रदान किया गया है। कोई भी व्यक्ति फुटपाथ पर भी अपनी अजीविका कमा सकता है। उसे मात्रा यह कहकर इस अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता कि फुटपाथ का उपयोग केवल आवागमन के लिए ही किया जा सकता है। दिल्ली देश की राजधानी और महानगर है। यहाँ की अधिकांश आबादी न केवल फुटपाथों पर अपनी रातें बिताती है अपितु दो जून

रोटी का जुगाड़ भी यहीं से बिठाती है। यदि उन्हें भी वंचित कर दिया जाये तो संविधानका अनुच्छेद 19 (1 N) इनके लिए मात्रा मृगतृष्णा बनकर रह जाता है। दिल्ली में कुछ ऐसा ही हुआ है। दिल्ली के फुटपाथों पर चना, मूँगफली और रेडीमेड गारमेन्ट्स का धंधा करने वाले व्यक्तियों को जब खदेड़ने की योजना बनी तो 'साडेन सिंह बनाम नई दिल्ली म्यूनिसिपल कमेटी'[2] के मामले में इन लोगों ने उच्चतम न्यायालय की पैढ़ी पर पैर रखा। उच्चतम न्यायालय ने बड़ी संवेदनशीलता से इस मामले पर विचार करते हुए व्यवस्था दी कि ''संविधान के अनुच्छेद 19 (1 N) के अंतर्गत नागरिकों को वृत्ति, व्यापार, व्यवसाय एवं कारोबार करने का मूल अधिकार प्रदान किया गया है। प्रत्येक व्यक्ति का अधि कार है कि वह अपनी अजीविका कमाये। किसी भी व्यक्ति को अकारण ही इस अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता। यदि कोई व्यक्ति फुटपाथ पर भी धंधा करता है अथवा फेरी से अपनी अजीविका कमाता है, तो उसे भी इस अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता। वस्तुतः समाज का यह निर्धन वर्ग और अधिक महत्वपूर्ण सहानुभूति का पात्रा है।''

उच्चतम न्यायालय का यह निर्णय समाज के उस कमजोर वर्ग की आंखों में आँसू पोंछने वाला है, जिसकी आजीविका फुटपाथों पर ही निर्भर करती है। बशर्ते कि इससे अन्य व्यक्तियों को किसी भी प्रकार की असुविध न हो, यातायात में किसी प्रकार का व्यवधान पैदा न हो, सुरक्षा व्यवस्था का संकट उत्पन्न न हो, स्कूलों और अस्पतालों के पास शोर-शराबा न हो तथा विवाद एवं शान्ति भंग न हो। मानव जीवन का संरक्षण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। मानव जीवन का अंत हो जाने पर उसे किसी भी दशा में पूर्वस्थिति में नहीं लाया जा सकता। अतः प्रत्येक चिकित्सक का यह कर्तव्य है कि जब भी उसके सामने कोई रोगी अथवा दुर्घटनाग्रस्त व्यक्ति आये, उसको अविलम्ब चिकित्सा सहायता उपलब्ध कराये। यह विचार उच्चतम न्यायालय को ''परमानन्द कटारा बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया'' [3] के मामले में इसलिए व्यक्त करने पड़े क्योंकि दिल्ली शहर में एक स्कूटर चालक की कार दुर्घटना में मृत्यु हो गई। निकट के सभी चिकित्सकों ने उसकी तुरन्त चिकित्सा करने से इसलिए इन्कार कर दिया कि पहले पुलिस थाने में रिपोर्ट दर्ज कराने आदि की विधिक औपचारिकतायें पूरी की जायें। उच्चतम न्यायालय ने इसे अनुचित मानते हुए कहा कि चिकित्स अधिकारियों का यह कर्तव्य है कि वे मानव जीवन की रक्षा के लिए चिकित्सा सहायता उपलब्ध कराने में किसी भी प्रकार की लापरवाही न बरतें। आज के इस व्यस्ततम जीवन में मोटर वाहन की अनेक दुर्घटनाएँ होती हैं। असंख्य व्यक्तियों के प्राण जोखिम में पड़ सकते हैं। ऐसे व्यक्ति तत्काल चिकित्सा सहायता पाने के हकदार होते हैं। उच्चतम न्यायालय ने इसकी तुलना निःशुल्क विधिक सहायता से करते हुए कहा कि जिस प्रकार निर्धन व्यक्ति निःशुल्क विधिक सहायता पाने का हकदार है, उसी प्रकार वे निःशुल्क चिकित्सा सहायता पाने के लिए हकदार हैं। कोई भी सरकारी चिकित्सालय अथवा उनमें कार्यरत चिकित्सा अध्किारी यह बहाना नहीं बना सकते हैं कि उनके पा वित्तीय संसाधनों का अभाव है। उच्चतम न्यायालय का यह निर्णय चिकित्सा व्यवसाय में मानवीय मूल्यों की स्थापना करने तथा मानवता के प्रति हमदर्दी का माहौल बनाने वाला एक सार्थक निर्णय है।

समान कार्य के लिए समान वेतन की अवधारणा मात्रा एक वैचारिक प्रतिपादन नहीं है और न ही यह एक लुभावना नारा मात्र है। यह एक अर्थपूर्ण अवधारणा है, जो संविधान के अनुच्छेद 14, 16 एवं 39 (?k) के अधीन प्रत्याभूत है।

संविधान के अनुच्छेद 14 के अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति को विधि के समक्ष समता एवं विधियों के समान संरक्षण की गारंटी प्रदान की गई है। अनुच्छेद 16 सभी नागरिकों को लोक नियोजन के सम्बन्ध में समता प्रदान करता है। इसमें कहा गया है कि लोक नियोजन में किसी नागरिक के साथ केवल धर्म, मूल-वंश, लिंग अथवा जन्म स्थान के आधार पर कोई विभेद नहीं किया जायेगा। अनुच्छेद 39 (?k) में यह व्यवस्था दी गई है कि पुरुषों एवं स्त्रियों को समान कार्य के लिए समान वेतन देय होगा। लेकिन जब समान कार्य के लिए स्त्रियों को पुरुषों के समान वेतन से वंचित रखा गया तो ''उत्तराखण्ड महिला कल्याण परिषद बनाम स्टेट ऑफ आन्ध्र प्रदेश''[4] के मामले में उच्चतम न्यायालय को यह कहना पड़ा कि पुरुष एवं महिला शिक्षकों के बीच समान कार्य के लिए असमान वेतना देना न्यायसंगत नहीं है। इतना ही नहीं ''बाबूलाल बनाम नई दिल्ली म्यूनिसिपल कमेटी''[5] के मामले में तो उच्चतम न्यायालय ने समान कार्य के लिए समान वेतन के परिप्रेक्ष्य में एक ही वर्ग के विभिन्न व्यक्तियों के बीच विभेद को भी असंवैधानिक करार दिया। इस मामले में बेलदार और मेटों को चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों के समान वेतन दिये जाने का प्रश्न उठा था।

भारत एक कल्याणकारी राष्ट्र है, जो असंख्य भारतीय नागरिकों के हृदय में रचे-बसे संविधान से शासित होता है। यह न केवल नागरिकों के मूल अधिकारों की सुरक्षा प्रहरी है अपितु समाज के कमजोर वर्ग के लिए सामाजिक और आर्थिक समानता को भी सुनिश्चित करता है। महिलाओं और बालकों का कल्याण इसका सर्वोपरि लक्ष्य है। लेकिन जब इस लक्ष्य से हटने का प्रयास किया जाता है, तो न्यायपालिका का हस्तक्षेप आवश्यक हो जाता है। ऐसा ही एक मामला है विक्रम देवसिंग तोमर बनाम स्टेट ऑफ बिहार का जिसमें नारी निकेतनों की अमानवीय दशा पर गहरी चिन्ता जताते हुए उच्चतम न्यायालय को यह कहना पड़ा कि यह संविधानके प्रावधनों का प्रत्यक्ष अतिक्रमण है। इस मामले में बिहार के नारी निकेतनो का दयनीय चित्राण किया गया है। उच्चतम न्यायलय का यह निर्णय उन असंख्य महिलाओं को सम्मानपूर्वक जीने का अवसर प्रदान करता है, जो समाज से पीड़ित, व्यथित एवं परित्यक्ता है, जिन्हें सुधार और पुनर्वास के लिए केयर होम और नारी निकेतनों के भेजा जाता है, जहाँ स्वावलम्बी और आत्मनिर्भर होने की अपेक्षा की जाती है।

आज के बालक कल के नागरिक हैं। उन्हीं के कन्धों पर कल के भारत का भार है। वहीं कल के नेता और राष्ट्र का गौरव हैं ''शीला बर्से बनाम सेक्रेटरी, चिल्ड्रन एण्ड सोसायटी''[6] के मामले मे उच्चतम न्यायालय को यह सब कुछ तय करना पड़ा जब महाराष्ट्र में बालकों के साथ अमानवीय व्यवहार का सिलसिला चरम सीमा तक पहुँच गया। एक समाजसेवी और पत्रकार इस मामले को उच्चतम न्यायालय तक ले गई। याचिका में कहा गया कि बम्बई में चिल्ड्रन एड सोसायटी नामक एक संस्था है, जिसकी देखरेख में कई रिमाण्ड होम एवं सम्प्रेक्षण गृह चलते हैं। इनमें निराश्रित एवं

आपराधिक प्रवृत्ति के बालकों को रखा जाता है। उन्हें निजी प्रतिष्ठानों में कार्य करने के लिए बाध्य किया जाता है। इनसे प्राप्त आय को सोसायटी के पास रखा जाता है। पारिश्रमिक के तौर पर इन बालकों को कुछ नहीं दिया जाता। यह संवैधनिक व्यवस्थाओं का उल्लंघन एवं बाल पीढ़ी के साथ अन्याय है। उच्चतम न्यायालय ने इन सभी बिन्दुओं पर मानवीय दृष्टिकोण अपनाते हुए बालकों के प्रति हमदर्दी जताई और कहा कि आज के बालक कल के भारत के निर्माता हैं। इस पौध को इस प्रकार पल्लवित एवं पुष्पित किया जाये कि कल वह एक वट वृक्ष के रूप में हमारे सामने आयें। उच्चतम न्यायालय ने बाल-कल्याण के लिए कई दिशा-निर्देश भी प्रदान किये।

प्रगतिशील अपराधशास्त्रियों का मत है कि अपराधी का परीक्षण, चिकित्सा एवं उपचार सामान्य रोगियों की तरह किया जाना चाहिये। गांधीवादी परीक्षण का आधार मानसिक और नैतिक मूल्यों को बनाया जाये क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति एक अच्छे व्यक्ति के रूप में जन्म लेता है लेकिन परिस्थितियाँ उसे अपराधी बना देती हैं। यह अपराधिता निवारण योग्य है।

जब कैदियों और बंदियों को चौबीसों घंटे हथकड़ियों और बेड़ियों में रखा जाने लगा तो ''सुनील बत्राा बनाम दिल्ली प्रशासन''[7] के मामले में उच्चतम न्यायालय को हस्तक्षेप करने को विवश होना पड़ा। अपराध जगत के दो चर्चित अभियुक्त रहे हैं सुनील बत्रा एवं चार्ल्स भोगराज। ये दोनों विभिन्न अपराधों में कारागृह में बंद रहे हैं। इन्हें सदैव हथकड़ी एवं बेड़ियों में रखा जाता था। उन्होंने इसे संविधान के अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी। न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर ने कहा-जेल न्याय में करूणा का महत्वपूर्ण स्थान है। जेल अध्किारियों को कैदियों के प्रति करूणा का भाव रखना चाहिये। उनके साथ मानवोचित व्यवहार करना चाहिये। घृणा अपराधी से नहीं, अपराध से करनी चाहिये।

हथकड़ी और बेड़ी लगाने का आधार अपराध की गंभीरता अथवा सजा मात्र नहीं है अपितु अपराधी की सुरक्षा और अभिरक्षा का भाव है। यदि अपराधी के भागने अथवा फरार हो जाने की आशंका नहीं है अथवा उसकी सुरक्षित अभिरक्षा को कोई खतरा नहीं है, तो हथकड़ी अथवा बेड़ी की आवश्यकता नहीं रह जाती। ''खड़क सिंह बनाम स्टेट ऑफ उत्तरप्रदेश''[8] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि- प्रत्येक व्यक्ति को संविधान के अन्तर्गत जीने का अधिकार है, लेकिन जीने से अभिप्राय पशुवत जीने से नहीं है अपितु सम्मानपूर्वक जीने से है। कारागृह में बंद हो जाने से कैदियों का यह अध्किार समाप्त नहीं हो जाता। न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर ने कहा कि ''मानव प्रतिष्ठा जैसे बहुमूल्य संवैधानिक आदर्शों की मात्रा जेल अधिकारियों की आशंका पर बलि नहीं दी जा सकती।''

संविधान के अनुच्छेद 19 (1 d) के अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति को वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रदान की गई है। इस स्वतंत्राता में प्रेस की स्वतंत्राता भी सन्निहित है। प्रेस अपने विचारों की अभिव्यक्ति प्रकाशन के माध्यम से कर सकता है। इस स्वतत्रांता के अन्तर्गत प्रेस को किसी भी व्यक्ति से सूचना पाने का अधिकार है, लेकिन जब प्रेस को इस अध्किार से वंचित रखने का प्रयास किया

गया तो ''श्रीमती प्रभा दत्त बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया''[9] के मामले में उच्चतम न्यायालय को यह कहना पड़ा कि प्रेस को सूचना पाने के अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता है। वह किसी भी व्यक्ति से संपर्क कर सकत है और उससे साक्षात्कार कर आवश्यक सूचनाएँ पा सकता है। यदि ऐसा व्यक्ति साक्षात्कार एवं सूचना देने के लिए सहमत हो तथा उससे देश की एकता और अखण्डता को संकट उत्पन्न न होता हो।

वस्तुतः यह कि हत्या के मामले में मृत्युदण्ड की प्रतीक्षा कर रहे रंगा और बिल्ला प्रेस को साक्षात्कार देना चाहते थे लेकिन जब हिन्दुस्तान टाइम्स की रिपोर्टर श्रीमती प्रभा दत्त उनका साक्षात्कार करने जेल पहुंची तो जेल अधिकारियों ने जेल नियमों की आड़ लेते हुए साक्षात्कार से रोक दिया था। इसी प्रकार लोकतंत्र में स्वच्छ एवं पारदर्शी शासन एवं प्रशासन के अस्तित्व के लिए जनसाधरण को सूचना पाने का अधिकार है। कोई भी व्यक्ति शासन एवं प्रशासन से उसके कृत्यों का लेखा-जोखा ले सकता है। ''एल.के. कूलवाल बनाम स्टेट ऑफ राजस्थान'' [10] के मामले में इस अधिकार की पुष्टि की गई है तथा प्रतिष्ठा और अवसर की समता उपलब्ध कराने का संकल्प समाहित है। संविधान के अनुच्छेद 39-क में यह कहा गया है कि कोई भी व्यक्ति मात्रा अर्थभाव के कारण न्याय से वंचित नहीं रहेगा। यह राज्य का कर्तव्य है कि निर्धन व्यक्तियों को निःशुल्क विधिक सहायता उपलब्ध कराये। 'एच.एच. हॉसकट बनाम स्टेट ऑफ महाराष्ट्र''[11] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह स्पष्ट किया है कि निर्धन व्यक्ति को निःशुल्क विधिक सहायता उपलब्ध कराना राज्य का कर्तव्य है, अनुकम्पा नहीं। ''सुकदास बनाम यूनियन टेरीटरी ऑफ अरूणांचल प्रदेश''[12] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यहां तक कह दिया कि अभियुक्त को अपने अधिकार से अवगत कराना न्यायालय का कर्तव्य है। दण्ड प्रक्रिया संहित 1973 की धरा 303 में अभियुक्त को अपी प्रतिरक्षा के लिए अपना मनपसंद अध्विक्ता नियुक्त करने का अधिकार है लेकिन ''तारासिंह बनाम स्टेट''[13] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने पहले ही कह दिया था कि ऐसा अधिकार अर्थहीन है यदि अभियुक्त के पास अधिवक्ता की नियुक्ति के लिए पर्याप्त साधन नहीं हो। परिणाम यह हुआ कि न केवल संविधान के अनुच्छेद 39-क में अपितु दण्ड प्रक्रिया संहित, 1973 क धरा 304 में निःशुल्क विधिक सहायता की व्यवस्था की गई।

इसी संदर्भ में मामलों में त्वरित निस्तारण का उल्लेख किया जाना भी समीचीन होगा। आज केवल निःशुल्क विधिक सहायत उपलब्ध कराया जाना ही पर्याप्त नहीं है अपितु मामलों का शीघ्र निस्तारण भी आवश्यक है। जन साधारण मामलों के निस्तारण में अत्याधिक एवं अनावश्यक विलम्ब से व्यथित है। विलम्ब से मिला न्याय उसके लिए सराहनीय है। न्याय की सार्थकता तभी है जब वह समय पर मिले। यही कारण है कि मामलों की त्वरित एवं सौहार्दपूर्ण निस्तारण के लिए ''लोक अदालतों'' का प्रचलन रहा है। आज लोक अदालतों के माध्यम से असंख्य मामलों का निस्तारण किया जा रहा है। दिल्ली उच्च न्यायालय ने ''अब्दुल हसन एण्ड नेशनल लीगल सर्विसेज ऑथोरिटी बनाम दिल्ली विद्युत बोर्ड''[14] के मामले में इन लोक अदालतों को स्थायित्व प्रदान करने तथा इन्हें निरन्तर चालू रखने की अनुशंसा की है।

पर्यावरण प्रदूषण आज की एक ज्वलन्त समस्या है। आज न केवल सम्पूर्ण मानव जाति अपितु पशु-पक्षी जगत भी इस समस्या से त्रास्त है। जहाँ वायु प्रदूषण ने एक तरफ वातावरण को प्रदूषित कर अनेक रोगों एवं बीमारियों का जन्म दिया है, वहीं दूसरी तरफ बढ़ते हुए रासायनिक पदार्थों के प्रदूषण से जल जमीन दोनों प्रभावित हुए हैं। राजस्थान के बिछड़ी गाँव में जब रासायनिक कारखानों से गाँव की खेतिहर भूमि अपना उपजाऊपन खोने लगी और जल प्रदूषित होने लगा तो ''इंडियन कौंसिल फॉर एन्वायरो लीगल एक्शन बनाम यूनियन ऑफ इंडिया''[15] के मामले में उच्चतम न्यायालय को इन कारखानों को बन्द करने का आदेश देना पड़ा।

ऐसा की कुछ ताजमहल के मामले में हुआ है जब विश्व के आश्चर्य एवं देश की अमूल्य धरोहर ताजमहल का सौन्दर्य संकट में पड़ गया है ''एम.सी. मेहता बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया''[16] के मामले में उच्चतम न्यायालय को इन कारखानों को बन्द करने का आदेश देन पड़ा।

इस प्रकार स्वतंत्रता प्राप्ति पश्चात के 50 वर्षों में हमारी न्यायपालिका ने निर्धन को झुग्गी-झोपड़ी से लेकर सौन्दर्य की बेजोड़ मिसाल ताजमहल को बचाने का हर संभव प्रयास किया है। आज सामाजिक न्याय की जड़े इतनी गहरी हो गई हैं कि वह कल के वट वृक्ष के रूप में हमारे सामने होगा। भारतीय संविधान के निर्माता के रूप में अम्बेडकर ने जो कार्य किया, निश्चित रूप से वह सराहनीय है और उनकी बौद्धिक क्षमता का सानी ढूंढना कठिन है। भारतीय परिस्थितियों के अनुरूप अम्बेडकर ने संविधान की रूपरेखा तैयार की थी। अछूतोद्धार को सफलता प्रदान करने हेतु उन्हें बेहतर अवसर मिला।

डॉ. एम.वी. पायली के शब्दों में-''अम्बेडकर ने संविधान में अपने महान व्यक्तिगत गुणों का समावेश किया। इसमें उनकी विद्वता तर्कशक्ति, कल्पना शक्ति और अनुभव के दर्शन होते हैं। जब भी सदन में पेश की गयी आलोचनाओं का वे उत्तर देते थे उन्हीं उत्तरों में संविधान की धराओं की व्याख्या हो जाती थी। वे वास्तव में ''आधुनिक मनु'' थे और उनको संविधान के मुख्य रचनाकारों में गिना जाना चाहिये।

मौलिक अधिकारों को उन्होंने शासन और विधन मंडल की स्वेच्छाचारिता पर अंकुश बताया। प्रत्येक मौलिक अध्किार के साथ यह अपवाद जोड़ा गया कि राज्य उस पर तार्किक प्रतिबन्ध लगा सके। नीति निर्देशक सिद्धान्तों के विषय में अम्बेडकर का कहना है कि ये संविधान द्वारा विधन मण्डल एवं कार्यपालिका को दिये गये निर्देश हैं कि वे किस प्रकार संविधान निहित अपनी शक्तियों का प्रयोग करें। मानव अधिकार एक विशेष प्रकार के वैश्विक नैतिक अधिकार हैं, जिनकी हर व्यक्ति को, हर समाज में और सर्वदा ही आवश्यकता रहती है। मानवाधिकार मनुष्य होने के कारण है। अतः मानव, मानवाधिकारों का केन्द्र बिन्दु है। इसलिये यह अध्किार सदा ही मनुष्य के लिये आवश्यक होते हैं, भले ही सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक स्थिति कुछ भी हो क्योंकि मानवाधिकारों में मनुष्य कहलाने के लिए आवश्यक भय, भूख और अपमान से मुक्ति के अध्किार समाहित है। अतएव इन्हें नैसर्गिक तथा अंतकरणहीन अधिकार भी माना जाता है।

संविधान निर्माण के समय डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने एक बार कहा था- ''यदि मुझसे पूछा जाये कि संविधान में कौन सा अनुच्छेद सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, जिसके बिना यह संविधान अर्थहीन हो जायेगा ता मैं अनुच्छेद 32 के सिवाय किसी अन्य अनुच्छेद का नाम नहीं लूंगा। सह संविधान की आत्मा है।'' डॉ. अम्बेडकर ने इन शब्दों से संवैधानिक उपचारों के अधिकार का महत्व स्वतः स्पष्ट हो जाता है। वस्तुतः यही एक ऐसा अधिकार है जो सभी अधिकारों को फलीभूत करता है। यदि यह अधिकार नहीं तै, तो अन्य सभी अधिकार व्यर्थ हो जाएंगे।

अनुच्छेद 32 के अन्तर्गत उच्चतम न्यायालय का एक महत्वपूर्ण अधिकार रिट जारी करने का है। इस संविधान द्वारा प्रदत्त मूल अधिकार मानवाधिकार के ही पयार्य हैं। दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। जहाँ मूल अधिकारों का उल्लंघन होता है वहाँ मानवाधिकारों का उल्लंघन होता है। अन्ततः डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने जिस संविधान को आत्मार्पित किया था, उस संविधान से मूल अधिकारों के द्वारा नागरिकों के मौलिक अधिकारों को गारण्टीकृत किया गया। संविधानके अनुच्छेद 14, अनुच्छेद 15, अनुच्छेद 16, अनुच्छेद 17, अनुच्छेद 19, अनुच्छेद 20, अनुच्छेद 21, अनुच्छेद 23 (1), अनुच्छेद 29 (2), अनुच्छेद 330, अनुच्छेद 332, अनुच्छेद 335 एवं अनुच्छेद 338 के प्रावधानों ने दलितों को नये विचार प्रदान किये, उनमें आत्म विश्वास और स्वावलम्बन की प्रवृत्ति उत्पन्न की। शिक्षा का महत्व उनके मन पर अंकित किया गया क्योंकि सामाजिक वर्गों के शोषण और पिछड़ेपन का अहम कारण अशिक्षित होना ही है। डॉ. अम्बेडकर के महान योगदान ने संविधान के प्रजातांत्रिक शासन प्रणाली देश को दी, साथ ही जातिगत आधार पर शोषण से बचाने का मूल अधिकार व नीति निर्देशिकाओं की संरचना की।

डॉ.भीमराव अम्बेडकर के योगदान का समूचा राष्ट्रीणी है। उनके सराहनीय प्रयासों का परिणाम ही सामाजिक न्याय एवं मानवाध्किार है। डॉ.अम्बेडकर ने सामाजिक व्यवस्था के विविध पक्षों को शास्त्रीय एवं व्यावहारिक दोनों दृष्टियों से देखा था और अपनी अद्भुत विश्लेषण क्षमता से उन्होंने परिस्थितियों की विषमता से संघर्ष करने का संकल्प लेने वालों को प्रेरणा दी। भारतीय समाज के विषमता मूलक तत्वों को जड़ से उखाड़ने के लिये उनके क्रान्तिकारी विचार आज भी प्राणवान हैं। सम्प्रति डॉ. अम्बेडकर के यथार्थ मूल्यांकन की आवश्यकता है, जिससे अपनी साधना से समाज को एक नया जीवन दृष्टि दी है।

संदर्भ

मानवाधिकार, द्वितीय संस्करण 2000-बसन्ती लाली बाबेल

गाँधी नेहरू, टैगोर एवं अम्बेडकर, द्वितीय संस्करण 2002- एल.एच. पाण्डेय

आधुनिक भारत के निर्माण, डॉ. भीमराव अम्बेडकर, संस्करण 2004- महेश अम्बेडकर

मानवाधिकार- नई दिशायें, संस्करण 2004-राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, नई दिल्ली

मानवाधिकार, द्वितीय संस्करण 2004-डॉ. टी.पी. त्रिपाठी

मानवाधिकार, 12वां संस्करण 2010-डॉ.एच.ओ. अग्रवाल

भारत का संविधान, 40वां संस्करण-डॉ. जे.एन. पाण्डेय 2007

हमारा संविधान, 2009- सुभाष कश्यप

समाज शास्त्र, संस्करण 2005- डॉ. ओ.पी. वर्मा